लखनऊ की चिकनकारी और नूरजहाँः एक एतिहासिक अन्वेषण

सौम्या शुक्ला

शोध छात्रा
पं. दीन दयाल उपाध्याय राजकीय कन्या महाविद्यालय लखनऊ

मुगल इतिहास के पन्नों पर अपनी छाप छोड़ते हुए नजाकत और नफासत के शहर में पहुंची चिकनकारी शैली अपने आप में बहुत विशेष है लखनऊ में चिकनकारी के संरक्षण और संवर्धन हेतु आज कई प्रयास किये जा रहे हैं, ताकि घरेलू बाजारों में अपनी विशेषता बनाए रखने के साथ वैश्विक स्तर पर भी इसको पहचान दी जा सके। इसके लिए जरदोजी का काम कर चिकन परिधानों को विशेष रूप से तैयार किया जा रहा है। प्रारंभ में चिकनकारी सूती कपड़ों पर की जाती थी, परंतु अब शिफान, जॉर्जेट, सिल्क (चंदेरी कोटा) और खादी के कपड़ों पर भी चिकनकारी की जा रही है। अपनी विशिष्टता के कारण ही उद्योग संवर्धन और आंतरिक व्यापार विभाग वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय के तहत द्वारा दिसंबर 2008 में इसे ळप् टैग प्रदान किया गया और वर्तमान समय में इस शैली को और बेहतर करने हेतु नवाचार भी किये जा रहे हैं.

मुख्य बिंदुः— मुगल, चिकनकारी, घरेलू, बाजार, वैश्विक व्यापार, संरक्षण, संवर्धन, नवाचार

भारत में कपड़ों पर डिजाइन की कला सदियों पुरानी परंपरा है जो देश की समृद्धि सांस्कृतिक धरोहर और कलात्मक प्रतिभा को प्रदर्शित करती है। कपड़ों पर डिजाइन की कला, विभिन्न शैलियों और तकनीकियो का संगम है ठीक वैसे ही चिकनकारी भारत की शाही कला है यह एक जटिल और नाजुक हाथ की कढ़ाई का रूप है जिसकी जगह भारतीय इतिहास के मुगल काल में पाई जाती हैं। चिकनकारी मुगल काल की सौंदर्य प्रेरित संवेदनाओं को प्रकट करती है जो अपने फूलों के डिजाइन और बारीक पैटर्न के लिए जानी जाती है। यह कालजयी शिल्प न केवल मुगल संस्कृति की भव्यता और परंपरा का प्रतिनिधित्व करती है जिसे पीढ़ी दर पीढ़ी संजोया और संरक्षित किया गया है। शताब्दियों का सफर तय करते हुए यह कला आज लखनऊ की पहचान और संस्कृतिक धरोहर का महत्वपूर्ण हिस्सा बन गई है। फारसी, मुगल और भारतीय डिजाइनों से प्रभावित यह नाजुक शिल्प कला परिधान परिदृश्य का एक अभिन्न अंग बन गई है। 19वीं सदी के लखनऊ में यह चिकनकारी परंपरा एक विशिष्ट सौंदर्य में व्यक्त सुशोभित भव्यता के पौराणिक स्तर तक विकसित हुई।

पैटर्न से अलंकृत पारदर्शी कपड़ों का भारत में एक लंबा इतिहास रहा है। इस संदर्भ में तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में बेहतरीन मलमल से बने फूलदार वस्त्र का उल्लेख देखने को मिलता है। बंगाल के चंद्र केतुगढ़ में इसी कला की प्राचीन टेराकोटिया छवियां है जिनमें देवी देवताओं के या राजकुमारों के शरीर को लपेटे हुए छोटे—छोटे रोसेट उकेरे गए, बेहतरीन मलमल को दर्शाया गया है। सातवीं शताब्दी के राजा हर्ष को पैटर्न के कढ़ाई वाले सफेद, मलमल के वस्त्र पसंद थे, लेकिन उन्हें सजाने के लिए कोई रंग, कोई अलंकरण और कोई शानदार चीज नहीं थी ऐसे में 16वीं शताब्दी में निर्यात की जाने वाली शाही मलमल द्वारा प्रदर्शित यह कल मात्र एक शब्द नहीं बल्कि भारत की प्रसिद्ध समृद्धि सांस्कृतिक विरासत का जीवंत प्रतीक है जो भारतीय परंपरा और शाश्वत सुंदरता को सजीव रूप से प्रस्तुत करता है।

चिकन शब्द का इतिहासः

"चिकनकारी" शब्द में चिकन शब्द फारसी भाषा के चकिन से बिगाड़ कर बना है जिसका अर्थ होता है— कशीदाकारी या बेल बूटे उभारना। इसका एक अर्थ ''कढ़ाई का काम या कढ़ाई की गई कलाकृति भी है इसके अंतर्गत लकड़ी के छापे पर मन चाहे बेल—बूटो के नमूने खोद कर इन नमूनों को कच्चे रंगों से कपड़ों पर छाप लिया जाता था और सुई और कच्चे सूत के धागों से इन पर विभिन्न प्रकार के टांके और जालियों का उपयोग करते थे। शाही अंगरखें और टोपियाँ में सोने के तार का प्रयोग भी किया जाता था। विभिन्न प्रकार के टांके और जालियों में मुर्री फंदा कांटा, तेप्सी, पाखंडी, लोंग, जंजीरा बंगला जाली, सिद्धौरा जाली, बुलबुल चश्मा जाली बखिया और राहत काफी प्रसिद्ध है। इन सब में सबसे कठिन और चुनौती कीमती टांका, नुकीली मुर्री है। उपयुक्त में से प्रत्येक का उपयोग एक अलग उद्देश्य के लिए किया जाता है।

शब्द चिकन फारसी है हालांकि इस भाषा में इसे इसे सोने के धागे और रजाई के साथ कढ़ाई के रूप में संदर्भित किया जाता था चिकन शब्द का उपयोग सफेद कपड़े पर सफेद कढ़ाई के लिए एक सामान्य शब्दों के रूप में भी किया जाता है

- चिकन कढ़ाई में सफेद मलमल (तंजेब), महीन सूती (मुल्मुल) पर सफेद धागें का उपयोग किया जाता है जो उन पर की गई कढ़ाई को सबसे अच्छा प्रदर्शित करता हैं। इसमें नवीनता लाने के लिए विभिन्न रंगों का भी प्रयोग किया जाता है। सफेद और हल्के रंगों का संयोजन इसकी सुदरता को और बढ़ाता है।
- चिकनकारी में छह बुनियादी टाँके होते है और पैंतीस से अधिक अन्य पारंपरिक टांके होते है जिनका उपयोग कढाई किए जाने वाले पैटर्न की आवश्यकता के आधार पर विभिन्न संयोजनों में किया जाता हैं। छह बुनियादी टांके– टेपची (बैक रनिंग स्टिच), बखिया, छूल, जंजीरा राहेट और बनारसी। इसके अतिरिक्त पारंपरिरक टांके जैसे ताइपची, खटौ, मकरा, कील कंगन, दरजदारी, कंगन बुलबुल, कपकपी मदराजी, ताजमहल, महरकी, करण, चनापट्टी बदला और जोरा आदि हैं। ये स्थानीय टांके है जो उनमें एकरूपता और स्थिरता रखते हैं इन्हें अलग–अलग संख्या में धागों का उपयोग करके बनाया जाता हैं।
- चिकनकारी के लिए प्रयोग में लाई जाने वाली शैली को छाया कार्य के रूप में जाना जाता है। कढ़ाई का सबसे खूबसूरत हिस्सा खुला काम हैं जो धागों को खींचकर किया जाता है। प्रत्येक सिलाई सही और साफ–सुथरी होती हैं। कढ़ाई कपड़े के गलत तरफ बनाई जाती है। जिससे कपड़े के दाहिनी तरफ हल्के रंग की छाया बनती है।
- रूपांकन आमतौर पर प्रकृतिक वनस्पतियों (फूल, लताओं का फीता पैटर्न जाल) फल (पैस्ले रूपांकनों के लिए आम और बादाम) और तोते, मोर जैसे पक्षियों से प्रेरित होते है जो विविधता में एकता की भावना पैदा करते हैं। पुराने पैटर्न एक वास्तुकला की नकल करने के कलात्मक कौशल के प्रतीक थे जैसे ताज, फतेहपुर सीकरी और इमामबाड़ा मस्जिद की दीवारों और जालियों ने कारीगरों को रूपांकन विकसित करने के लिए प्रभावित किया। रंगों का परिचय चिकन की कढ़ाई में एक नवाचार हैं जहाँ पहले सिर्फ सफेद और पेस्टल रंग का उपयोग किया जाता था वही अब व्यापक रंगों का प्रयोग किया जाता है।

चिकन कढ़ाई की उत्पत्तिः चिकन शिल्प कला की तकनीकियों को जानने से पहले उसकी उत्पत्ति का पता लगाना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि इस कला का शाही संरक्षण और उत्पत्ति इस कढ़ाई शैली में हुए तकनीकी विकासों के लिए स्पष्टीकरण प्रदान करती हैं। एक कला के रूप में इसका अपना इतिहास रहा हैं। विभिन्न इतिहासकारों और विद्वानों ने इस कला की उत्पत्ति और इसके तकनीकी विकास के सम्बन्ध में अपने–अपने मत दिए है जिनमें से कुछ प्रमाणित और तटस्थ मत भी है जो इस कला को एक आधार प्रदान करते हैं।

यूरोपीय कारीगर 16 वी शताब्दी के अंत में मुगल दरबार में विभिन्न वास्तुशिल्प डिजाइनों और नवाचारों के साथ मोजेक टाइल सजावट तकनीक लाए। उस समय जहाँगीर का शासन था जो स्वयं में कला और वास्तुकला का पारखी था। अपने इसी गुण के कारण जहाँगीर ने अपने मुगल स्मारकों में यूरोपीय मोजेक टाइल सजावटी रूपांकनों की नकल करने का आदेश दिया। इस प्रकार मूल शैली में रूपांकनों की नकल की गई, जिसे अक्सर मुगल स्मारकों पर सजावटी रूपांकन के रूप में उपयोग किया जाता था। जहाँगीर की पत्नी नूरजहाँ उन राहत और उभरे हुए सजावटी रूपांकनों से प्रेरित थी और इसी वजह से उन्होंने अपने चिकन कढ़ाई परिधानों में वास्तुशिल्प रूपांकन की नकल की। इमारतों पर जाली के काम, फूलों के डिजाइन और लकड़ी के ब्लाकों पर दोहराने, कपड़े पर मुद्रित करने और बढ़िया मलमल पर कढ़ाई करने का आदेश दिया।

चिकनकारी कढ़ाई के बारे में यह भी कहा जाता है कि एक बार एक यात्री लखनऊ के एक गाँव से गुजर रहा था। प्यास लगने पर उसने एक गरीब किसान से पानी मांगा। किसान की मेहमान नवाजी से खुश होकर यात्री ने उसे चिकनकारी की कला सिखाई जिसके बाद वह किसान कभी भूखा नही रहा। उस किसान का नाम मोहम्मद शाहिर खान था। मुगलों के पतन के बाद धीरे–धीरे यह कला मुख्यतः बंगाल और लखनऊ के साथ–साथ समस्त भारत में फैल गई। ऐसा कहा जाता है कि नवाब की पत्नियों में से एक पत्नी बंगाल के मुर्शीदाबाद की रहने वाली थी, जहाँ उस समय चिकन का काम स्थापित और लोकप्रिय था। हरम में रहते हुए उनके पास करने को कुछ ज्यादा नही था, ऐसे में खुद को व्यस्त रखने के लिए उन्होंने चिकन के काम वाली नवाब की टोपी पर कढ़ाई की। जिसे देखकर नवाब बहुत प्रसनन हुए। नवाब को प्रभावित करने के लिए अन्य बेगमों ने भी इस कला को अपनाया। इस प्रकार चिकन कढ़ाई उच्च वर्ग से संबद्व हो गई।

विद्वानों का मानना है कि लखनऊ में चिकन कढ़ाई सदियों के शाही संरक्षण और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार सम्बंधों के दौरान बंगाल में विकसित मलमल, जामदानी और चिकन शिल्प कौशल से आई है। यह कला मुगल शासकों और उनके कुलीन परिवारों के संरक्षण में फली–फूली। 18 वीं और 19 वीं शताब्दी में अवध के नवाबों के शासनकाल के दौरान इस कला को काफी लोकप्रियता और शाही संरक्षण प्राप्त हुआ। इस क्षेत्र के शासकों ने इस कला को बढ़ावा देने और संरक्षित

करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने कुशल कारीगरों को कुलीन वर्ग और शाही दरबार के लिए बेहतरीन चिकन वस्त्र बनाने के लिए प्रोत्साहित किया।
चिकनकारी कला के मुर्शीदाबाद से लखनऊ आने के बावजूद भी, बंगाल के चिकन कार्य और लखनऊ के चिकन कार्य में आश्चर्यजनक अंतर देखने को मिलता हैं पहला जहाँ जनसाधारण की पूर्ति करता है, वही दूसरा वर्गो की पूर्ति करता है।

नूरजहाँ और चिकनकारीः

नूरजहां का बचपन का नाम मेहरून्निशा था। उनके पिताजी मिर्जा ग्यासबेग प्रारंभ से अपनी पुत्री की शिक्षा पर बहुत अधिक ध्यान देते थे। वह अपनी पुत्री को दक्ष बनाना चाहते थे। 15 वर्ष की उम्र में उन्होंने इतिहास में दक्षता हासिल कर ली थी। नूरजहां ललित कला में भी दक्ष थी। मात्र 13 वर्ष की उम्र में उन्होंने नौरोज उत्सव के एक दृश्य को चित्रित किया जिसकी प्रशंसा समकालीन चित्रकार उस्ताद अब्दूस मसद ने की।
उनकी बुद्धि इतनी तीव्र और अंतर्दृष्टि इतनी गहरी थी कि वह जो कुछ भी करती थी उसमें दूर तक मौलिकता प्रदर्शित होती थी। नूरजहां की मां अस्मत बेगम जो एक कुशल महिला थी, ने उन्हें सिलाई कढ़ाई और ड्रेस डिजाइनिंग और जरी के काम को फारसी शैली में प्रशिक्षित करने में व्यक्तिगत देखभाल की। कविता ने भी उन्हें आकर्षित किया और अपने लयबद्ध रूप और गीतात्मक स्वभाव के कारण वह एक कवयित्री के रूप में भी प्रसिद्ध हुई.
नूरजहां एक उत्कृष्ट फारसी कवयित्री चित्रकला और वास्तुकला की संरक्षक, सुशिक्षित महिला थी। जहांगीर से विवाह के पश्चात जब वह मुगल साम्राज्य का अहम हिस्सा बनी तो वह वहाँ की वास्तु शिल्प डिजाइनों उभरे हुए सजावटी रूपांतरण से इतनी प्रभावित हुई कि उन्होंने मूल शैली में ही रूपांतरण के नकल करने का आदेश दे दिया। इस क्रम में वस्त्रों पर सजावटी राहत और उभरा हुआ मुगल रूपांतरण का प्रयोग पहली बार नूर जहां द्वारा ही किया गया। इन्हें ही चिकन की कढ़ाई के विकास और वास्तु शिल्प रूपांकनों की प्रतिकृति का श्रेय दिया जाता है।
नूरजहां एक अलग स्वभाव की महिला थी। वह जहांगीर के साथ कला और अलंकरण के प्रति अपने प्रेम को सांझा करती थी ऐसे में मुगल इमारतें पर उभारी हुई यूरोपीय वास्तु शिल्प डिजाइनों और तकनीकों की बारीकियों को समझना और जहांगीर से इसकी चर्चा करना वाजिब था। जहांगीर नये अन्वेषण हेतु नूरजहां को सदैव प्रोत्साहित किया करते थे। शेर अफगन से अपनी पहली शादी के समय कुछ वर्षों तक वह ढाका में रही और ऐसे में उनका वहां उत्पादित बेहतरीन मलमल से परिचय हुआ।
मुगल दरबार के प्रसिद्ध चित्रकार बिचित्रा द्वारा 1620 ई के एक चित्र में सम्राट जहांगीर को फूलों की सिलाई के साथ एक मलमल जामा पहने हुए देखा जाता है जो चिकन कढ़ाई के साथ पाए जाने वाले फूल का दराज या फूलों की सिलाई के समान दिखता है। समकालीन अन्य कलाकारों द्वारा बनाए गए अन्य लघु चित्रों में उनके बेटे सम्राट शाहजहां द्वारा भी इसी तरह की पोशाके पहनी गई है।
इसका वर्णन तुजुक–ए–जहांगीरी में स्वयं जहांगीर ने किया है कि ''नूरजहां बेगम ने मेरे बेटे शाहजहां के लिए जीत की दावत तैयार की और उसे मूल्यवान पोशाके दी जिसमें कढ़ाई वाले फूलों वाली नादिरी, दुर्लभ मोतियों और रत्नों से जड़ित पगड़ी, मोतियों से जड़ी एक कमरपेटी, एक फूल जकातद (खंजर) रत्न जड़ित परदाला (बेल्ट) वाली तलवार आदि थें।''
वह खुद को व्यस्त रखती थी और काम के प्रति पूरी तरह समर्पित थी। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि उन्होंने हरम का पूरा माहौल बदल दिया। उन्होंने हरम की महिलाओं को पढ़ाई और सिलाई सिखाई। खाली समय में वह उन्हें हस्तशिल्प सिखाती थीं। नूरजहां अपनी कोमल लेकिन कुशल उंगलियों से रेशम के कपड़े पर नक्काशीदार कढ़ाई करती थी और मीना बाजार में हरम की महिलाओं को बेचती थी, जिससे प्रभावित होकर उनके अंदर उस कला को सीखने की जिज्ञासा पैदा होती थी। नूरजहां की पेंटिंग, कढ़ाई और खुशबू के उद्योग ने हरम की महिलाओं के जीवन को एक नया रूप दिया।
नूरजहां की इस नायाब कला का उदाहरण हमें उनके पिता मिर्जा ग्यास बेग एतमादुदौला के मकबरे पर भी देखने को मिलता है। इस मकबरे के सभी सजावटी रूपांकन सीधे तौर पर नूरजहां से प्रेरित हैं उसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि नूरजहां अपने समय की फैशन क्वीन थी। उनके द्वारा शुरू की गई यह नायाब शैली वर्तमान में भी जीवंत है।

वर्तमान परिदृश्यः

चिकनकारी कला वैश्विक पटल पर धीरे–धीरे अपनी पहचान बना रहा हैं अमेरिका से लेकर यूरोप तक के लोग इसके दीवाने हैं। मुख्यतः यूनाइटेड किंगडम, कनाडा, यूरोप, इटली, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, मध्यपूर्व और अफ्रीकी देशों की रूचि काफी बढ़ गई हैं। नवम्बर 2023 तक, भारत से चिकनकारी निर्यात 2.2झ था, जिसे 76 भारतीय निर्यातकों द्वारा 683 खरीदारों को निर्यात किया गया था। भारत अपनी अधिकांश चिकनकारी सिंगापुर, सं0 रा0 अमेरिका और संयुक्त अरब अमीरात को निर्यात करता है। (वोल्जा के भारत निर्यात डेटा के अनुसार)

हाल ही में चिकन की एक साड़ी दुबई में 21 लाख रूपये में बिकी जो इस बात को प्रमाणित करती है कि कैसे इस कला ने वैश्विक स्तर पर लोगों के दिलों में अपनी जगह बनाई ळे और किस प्रकार से इस कला से जुड़े कारीगरों और उद्यमियों के लिए अपार अवसरों की संभावनाएँ बढ़ी हैं।

घरेलू स्तर पर लखनऊ (उ0 प्र0) के अतिरिक्त दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, सूरत और अहमदाबाद आदि शहर इसका निर्यात कर रहे है। इस उद्योग का सलाना टर्नओवर 600 करोड़ रूपये हैं चिकनकारी व्यवसाय से लगभग 2 लाख से ज्यादा लोग जुड़े है जो भारत के कुल कारीगरों का लगभग 30ः है।

कारीगरों की स्थितिः

उत्कृष्ट शैली, घरेलू बाजारों पर विशेष प्रभाव विदेश में बढ़ती मांग और अन्य संभावनाओं तथा अवसरों को समेटे होने की बावजूद भी यह कला, इससे जुड़े कारीगरों की आर्थिक, शारीरिक और सामाजिक स्थिति में कोई सुधार नहीं कर पा रही है जिसके मुख्य कारण हैं।

इस उद्योग से जुड़े कार्यक्रमों में 90ः से ज्यादा महिलाएं हैं जिनमें 69 प्रतिशत महिलाएं 36 से 45 वर्ष तक और 22ः 26 से 35 वर्ष तक है इससे यह बात साफ होती है कि युवा वर्ग का झुकाव इस कार्य हेतु कम है। ऐसा इसलिए भी है कि इस कला से जुड़े लोगों (कारीगरों) को मन मुताबिक पैसा नहीं मिलता। 65 से 70ः कारीगर ऐसे हैं कि जिन्हें मात्र ₹6000 से ₹10000 तक मिलता है और जो बहुत अनुभवी और कुशल होते है। उन्हें ही 10000 रूपये से ज्यादा मिल पाता है ऐसे में इतने कम पैसे में घर चलाना मुश्किल हो जाता है।

इसके अतिरिक्त लगातार 8 से 10 घंटे काम करने की वजह से महिलाओं के हाथों में झुनझुनी, गठिया, त्वचा पर चकत्ते, गर्दन में दर्द, आंखों की रोशनी का कम होना आदि बीमारियों का सामना करना पड़ रहा है। इस सबसे इनका स्वास्थ्य खराब हो रहा है। इन सब का मुख्य कारण कार्य स्थल पर अच्छी तकनीक और सुविधाओं का ना होना है।

विशलेषण

1. **कमजोरी**
   - चिकनकारी की कढ़ाई में समय लगता है।
   - इस कला से जुड़े कारीगरों को उनके मनमुताबिक पैसे नहीं मिलते है।
   - तकनीक और अच्छी सुविधाओं के अभाव में, स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता हैं
2. **खतराः–**
   - वैश्वीकरण की वजह से पाकिस्तान, चीन और अन्य ऐसे देशों से मिलते–जुलते परिधान भारत आने को खतरा बना रहता है।
   - बढ़ते तकनीक और प्रतियोगिता के दौर को देखते हुए प्रतियोगी मुद्रित (प्रिंटेड) और मशीन द्वारा निर्मित कढ़ाई वाले परिधान प्रयोग करते हैं। जिससे हाथों की इस कला पर संकट आ गया हैं।
3. **ताकतः–**
   - यह कला प्राचीन और शाही है।
   - यह कला वर्तमान समय में अब विभिन्न कपड़ों जैसे शिफॉन, जार्जेट, सिल्क (चंदेरी, कोटा), सूती और खादी के कपड़ो पर भी देखने को मिलती है।
4. **अवसरः–**
   - बदलती जीवन शैली को देखते हुए इस कला की उत्पाद श्रृंखला में बहुत गुजांइश हैं।
   - विदेशों और घरेलू बाजारों में इस कला की बढ़ती माँग, इस उद्योग से जुड़े लोगों के लिए अपार संभावनाएं समेटे हुए है।

निष्कर्ष

लखनऊ की चिकनकारी एक प्राचीन और प्रतिष्ठित कला है, जिसने स्थानीय और वैश्विक बाजारों में अपनी विशेष पहचान बनाई हैं। मुगल सम्राज्ञी नूरजहाँ ने इस कला को विशेष संरक्षण और प्रोत्साहन दिया, जिससे यह कला मुगल दरबार में अपनी जगह बना सकी और बाद में लखनऊ की पहचान बन गई।

घरेलू बाजार में, चिकनकारी ने रोजगार के अनेक अवसर पैदा किए हैं। हालाँकि, इस उद्योग में काम करने वाले कारीगरों को अक्सर कम मजदूरी मिलती है, जो उनकी आर्थिक स्थिति को और चुनौतीपूर्ण बनाता हैं इसके आलावा चिकनकारी के काम में लंबे समय तक बैठकर काम करने के कारण कारीगरों को स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं भी होती है, जैसे आंखो की समस्याएं, पीठ दर्द, हाथों में झुनझुनी आदि।

वैश्विक स्तर पर लखनऊ की चिकनकारी की माँग लगातार बढ़ रही है। विदेशी बाजारों में इस कला की सुंदरता और बारीकी की बहुत प्रशंसा की जाती है। इसके बावजूद कम मजदूरी और बीमारियों की समस्याएं इस उद्योग के सामने गंभीर चुनौतियां पेश करती हैं।
वर्तमान में इस उद्योग से जुड़े कारीगरों की आर्थिक और स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को हल करने के लिए अधिक समर्थन और सुधार की आवश्यकता है। इसके साथ–साथ वैश्विक स्तर पर इसकी मांग को और बढ़ाने पर जोर देने की जरूरत है जिससे यह और ज्यादा रोजगार के अवसर पैदा कर सके। इसके बिना इस समृद्ध कला की चमक को लंबे समय तक बनाए रखना कठिन हो सकता है।

सन्दर्भ सूची

पुस्तकः

1. अलेक्जेंडर एवं हेनरी द्वारा संपादित – 'तुजुक–ए–जहाँगीरी' या जहाँगीर के संस्मरण (अनुवादित संस्करण)
2. फाइन्डली, एलिसन बैंक्स – 'नूरजहाँ' – एम्प्रेस ऑफ मुगल इण्डिया
3. गर्ग राजीव (राधा पब्लिकेशन)– 'हिस्ट्री ऑफ बेगम नूरजहाँ'
4. भट्ट राजीवः 'द लाइफ एण्ड टाइम्स ऑफ नवाब ऑफ लखनऊ'
5. मुखर्जी सोमाः 'रॉयल मुगल लेडीज एण्ड देयर कन्ट्रीब्यूशन'
6. सरन लाल किशोरी : 'द मुगल हरम'

लेखः

1. कॉन्सेप्ट ऑफ स्टाइल एण्ड इट्स रिलेशन टू चिकन इम्ब्रॉयडरीः अंकिता कपूर।
2. चिकनकारी फ्रॉम लखनऊ (इंडियन हॉरिजन अवसण 63 छवण 2. 2016
3. इंटरनेशनल जनरल ऑफ इन्जीनियरिंग साइन्सेस – राजिन्दर कौर
4. द ग्रेट वीमेन बिहाइन्ड द मुगल हरम एंड देयर कन्ट्रब्यूशन– डॉ0 अरूंधती सिंह
5. चिकनकारी उद्योग में कार्यरत महिलाओं का विवरण और उनके स्वास्थ्य पर प्रभाव – प्रीति सिंह और डॉ0 प्रॉमिला शर्मा
6. सतत् चिकनकारी शिल्प और चिकनकारी अपशिष्ट के माध्यम से एक अध्ययन– श्रृद्धा पांडे, कोमल खंडेलवाल